शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 04 अंक– 13 जनवरी - मार्च - 2026 Impact factor– 4.5

विवेकी राय के कथा-साहित्य में लोक-संस्कृति, आंचलिकता और भाषिक सौंदर्य

मदन मोहन सिंह
शोधार्थी
हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म.प्र.)

डॉ. मंगल सिंह अहिरवार
शोध निर्देशक
सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय जयसिंह नगर, जिला - शहडोल (म.प्र.)

सारांश-डॉ. विवेकी राय का कथा-साहित्य भारतीय ग्रामीण जीवन, लोक-संस्कृति और आंचलिक परिवेश का एक ऐसा जीवंत दस्तावेज है जो हिंदी साहित्य में अपनी अलग पहचान बनाता है। उनके उपन्यासों और कहानियों को पढ़ते हुए लगता है मानो हम किसी गाँव की गली में घूम रहे हों—मिट्टी की सोंधी गंध आ रही हो, खेतों में हल की आवाज़ गूँज रही हो और किसी चौपाल पर बुज़ुर्ग लोग पुरानी बातें सुना रहे हों। यह शोध-पत्र उनके कथा-संसार के तीन मुख्य स्तंभों—लोक-संस्कृति, आंचलिकता और भाषिक सौंदर्य—पर केंद्रित है।

पूर्वांचल, खासकर बलिया और गाजीपुर के दोआब तथा मंगई नदी के किनारे बसे गाँवों का भूगोल, वहाँ के पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज, लोक -विश्वास और बदलते समय के आर्थिक संघर्ष उनकी रचनाओं में बहुत प्रामाणिकता के साथ आए हैं। भाषा के स्तर पर उन्होंने मानक हिंदी की शुचिता को बचाए रखते हुए भोजपुरी की ठेठ मिठास, मुहावरों और देशज शब्दों का ऐसा मिश्रण तैयार किया है कि पाठक सहज ही उस परिवेश में पहुँच जाता है।

संक्षेप में, विवेकी राय का कथा-साहित्य महानगरों की कृत्रिम चमक-दमक से दूर ग्रामीण भारत की आत्मा, उसके सौंदर्य और उसके अंतर्विरोधों का एक सच्चा महाकाव्य है। यह केवल अतीत की याद नहीं, बल्कि गाँव के विकास, उसकी पीड़ा और संघर्ष का जीवंत इतिहास भी है जो हमें अपनी जड़ों से जोड़ता है।

बीज शब्द- विवेकी राय का कथा-साहित्य, लोक-संस्कृति, आंचलिकता, भाषिक सौंदर्य, पूर्वांचल का जनजीवन, लोक-भाषा और मुहावरे, सोनमती, ग्रामीण यथार्थ।

प्रस्तावना-हिंदी साहित्य के आँगन में डॉ. विवेकी राय (१९ नवंबर १९२४ – २२ नवंबर २०१६) एक ऐसे रचनाकार हैं जिनकी लेखनी में गाँव की मिट्टी की महक बसी हुई है। वे आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय की ललित निबंध परंपरा के महत्वपूर्ण स्तंभ तो थे ही, कथा-साहित्य के क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी एक मजबूत और स्थायी जगह बनाई। उनके उपन्यास और कहानियाँ पढ़कर लगता है कि उन्होंने गाँवों की आत्मा को शब्दों में उतार दिया है। नगरीय जीवन की भागदौड़, कृत्रिमता और अमानवीयता से कोसों दूर उनका कथा-संसार विशुद्ध ग्रामीण परिवेश पर टिका हुआ है। गाजीपुर और बलिया की सीमाओं से निकलकर पूरा पूर्वांचल उनके यहाँ साकार हो उठता है—अपने उल्लास, संघर्ष, अंतर्विरोध और सौंदर्य के साथ। उनके पात्र कागजी नहीं होते। वे खेतों में पसीना बहाते, लोक-गीतों में सांस लेते और अपनी मिट्टी से जुड़े वास्तविक मनुष्य लगते हैं।

विवेकी राय का जन्म पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक साधारण ग्रामीण परिवेश में हुआ था। उन्होंने जीवन भर उसी मिट्टी से गहरा रिश्ता बनाए रखा। गाजीपुर के कॉलेज में प्राध्यापक रहते हुए भी वे कभी शहर की चमक-दमक में नहीं खोए। उनकी रचनाधर्मिता का मूल स्रोत वही गाँव था जहाँ वे पले-बढ़े थे। यही वजह है कि उनके कथा-साहित्य में गाँव केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि एक जीवंत चरित्र बनकर उभरता है। मंगई नदी के किनारे बसे गाँव, वहाँ की बाढ़ और सूखा, खेतों की गंध, चौपाल की बातें, लोक-पर्वों का उल्लास और किसानों की रोजमर्रा की जद्दोजहद—सब कुछ उनकी लेखनी में प्रामाणिकता के साथ उपस्थित है। वे फणीश्वरनाथ रेणु और नागार्जुन की आंचलिक परंपरा को आगे बढ़ाने वाले उन लेखकों में से हैं जिन्होंने पूर्वांचल के जनजीवन को हिंदी कथा-साहित्य के केंद्र में ला खड़ा किया।

उनके कथा-संसार की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह न तो गाँव का रूमानी चित्रण भर है और न ही केवल यथार्थ का कठोर दस्तावेज। वे दोनों को एक साथ समेटते हैं। एक ओर लोक-संस्कृति के रंग-बिरंगे पर्व, रीति-रिवाज, लोक-गीत और सामूहिक उल्लास हैं, तो दूसरी ओर शोषण, पलायन, जातिगत विभेद, अंधविश्वास और बदलते सामाजिक मूल्यों की पीड़ा भी मौजूद है। वे लोक-संस्कृति के पक्षधर हैं, लेकिन उसके नाम पर पनपने वाली रूढ़ियों और कुसंस्कारों की आलोचना करने से भी नहीं हिचकते। यही संतुलित दृष्टि उनके साहित्य को गहराई और विश्वसनीयता प्रदान करती है।

भाषा के स्तर पर भी विवेकी राय का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने मानक हिंदी की गरिमा को बनाए रखते हुए भोजपुरी की ठेठ मिठास, मुहावरों, लोकोक्तियों और देशज शब्दों का ऐसा रसायन तैयार किया जो पाठक को सीधे गाँव की गली में पहुँचा देता है। उनकी भाषा न तो अति साहित्यिक है और न ही कृत्रिम। वह उसी मिट्टी से उपजी हुई लगती है जिसमें उनके पात्र सांस लेते हैं। संवाद इतने स्वाभाविक होते हैं कि लगता है कोई साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि आस-पास की कोई बातचीत चल रही है। यही भाषिक सौंदर्य उनकी रचनाओं को यादगार बनाता है।

इस शोध-पत्र का उद्देश्य उनके संपूर्ण कथा-साहित्य-विशेषकर उपन्यासों और कहानियों में लोक-संस्कृति, आंचलिकता और भाषिक सौंदर्य के इन तीन आधारों का गहराई से विश्लेषण करना है। यह अध्ययन बताता है कि विवेकी राय ने कैसे लोक-संस्कृति के अनछुए पक्षों को सामने लाया, पूर्वांचल के भूगोल और समाज को आंचलिकता के शिल्प में ढाला और लोक-भाषा के मुहावरों से हिंदी कथा-भाषा को नई समृद्धि दी। यह काम केवल साहित्यिक मूल्यांकन नहीं, बल्कि ग्रामीण भारत के सौंदर्य, उसकी विडंबनाओं और उसके बदलते चेहरे को समझने की एक सच्ची कोशिश भी है। आज जब गाँव तेज़ी से बदल रहे हैं और कई पारंपरिक मूल्य लुप्त होते जा रहे हैं, विवेकी राय का कथा -साहित्य हमें याद दिलाता है कि हमारी जड़ें कहाँ हैं और उन जड़ों से जुड़े रहना कितना आवश्यक है। उनकी रचनाएँ न केवल अतीत का दस्तावेज हैं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी एक महत्वपूर्ण संदर्भ बिंदु हैं।

विवेकी राय के कथा-साहित्य में लोक-संस्कृति: जन-जीवन का प्राण-तत्व- लोक-संस्कृति किसी समाज की वह अंतर्सलिला है जो सदियों से जन-जीवन को सींचती आ रही है। विवेकी राय की रचनाओं में यह संस्कृति इतनी घुली-मिली है कि उनकी किताबें पढ़े बिना

भारतीय लोक-मानस की असलियत को समझना मुश्किल लगता है। उनके यहाँ लोक-संस्कृति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि कथा का प्राण बन जाती है।

लोक-पर्व, रीति-रिवाज और मेलों का जीवंत चित्रण उनके उपन्यासों और कहानियों में बार-बार आता है। होली, दीपावली, छठ, जितिया, तीज, कजरी—ये सब उनके कथा-जगत में सिर्फ नाम नहीं, बल्कि पूरे समाज की धड़कन बनकर उभरते हैं। मेलों की रौनक, झूलों की आवाज़, ठेठ ग्रामीण बाजारों की चहल-पहल और लोक-उत्सवों में लोगों की भीड़—सब कुछ इतनी सजीवता से चित्रित है कि पाठक स्वयं उस मेले में पहुँच गया-सा महसूस करता है। पर्व उनके यहाँ केवल कर्मकांड नहीं। वे सामाजिक रिश्तों को मजबूत करने, सुख-दुख बाँटने और सामूहिक मन को जोड़ने का माध्यम बनते हैं। भाईचारा, साझेदारी और सांस्कृतिक एकता इन पर्वों के जरिए बहुत स्वाभाविक ढंग से उभरती है।

लोक-संस्कृति का दूसरा पक्ष लोक-विश्वासों और रूढ़ियों से जुड़ा है। विवेकी राय ने इसे पूरी जटिलता के साथ दिखाया है। एक ओर गाँव के देवी-देवता, डीह-बार, ब्रह्म बाबा और ग्राम्य देवताओं के प्रति गहरी श्रद्धा दिखाई देती है, तो दूसरी ओर डायन-प्रथा, अंधविश्वास, छुआछूत और जातिगत पाबंदियों का तीखा यथार्थ भी मौजूद है। वे लोक-संस्कृति के नाम पर पनपने वाली हर रूढ़ि का समर्थन नहीं करते। एक संवेदनशील रचनाकार की तरह वे उन मान्यताओं के भीतर छिपी मानवीय पीड़ा और द्वंद्व को भी ईमानदारी से उजागर करते हैं। यही वजह है कि उनके कथा-पात्र न तो पूरी तरह आदर्शवादी लगते हैं और न ही निराशावादी। वे वास्तविक मनुष्य हैं—श्रद्धा और संदेह, परंपरा और बदलाव के बीच झूलते हुए।

आंचलिकता का शिल्प और यथार्थवादी आयाम-फणीश्वरनाथ रेणु और नागार्जुन की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए विवेकी राय ने पूर्वांचल—विशेषकर बलिया और गाजीपुर के दोआब तथा मंगई नदी के तटवर्ती क्षेत्रों—को अपने कथा-साहित्य का केंद्र बनाया। आंचलिकता उनके यहाँ केवल भौगोलिक वर्णन नहीं। वह उस क्षेत्र की हवा, मिट्टी, समाज, अर्थतंत्र और लोगों के मनोविज्ञान का पूरा और प्रामाणिक चित्र है।

भूगोल उनके कथा-साहित्य में मूक पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि एक जीवंत पात्र की तरह काम करता है। मंगई नदी और उसके किनारे, बाढ़ की विभीषिका, सूखे की मार, चिलचिलाती धूप और सावन की रिमझिम—सब कुछ उनकी रचनाओं में सांस लेता हुआ लगता है। नदी किनारे सुबह महिलाओं का दातून करना, बर्तन मांजना, लोक-गीत गाना और बीच-बीच में गाँव की राजनीति पर बातें करना—ये छोटे-छोटे दृश्य उस आंचलिक जीवन की असल तासीर को हमारे सामने ला देते हैं। पाठक महसूस करता है कि वह किसी उपन्यास में नहीं, बल्कि उसी नदी के किनारे खड़ा है।

विवेकी राय का कथा-साहित्य पुरानी स्मृतियों का रूमानी रोदन मात्र नहीं। यह गाँव के बदलते अर्थतंत्र और सामाजिक ताने-बाने के टूटने-जुड़ने का दस्तावेज भी है। आज़ादी के बाद भूमि सुधारों की विफलता, किसानों का शोषण, महाजनों और सामंती ताकतों का दबाव, युवाओं का रोजी-रोटी की तलाश में शहरों की ओर पलायन और गाँवों का धीरे-धीरे खोखला होना—ये सब उनके उपन्यासों में पूरी शिद्दत के साथ आए हैं। 'सोनमती', 'जुलूस रुका है' और 'सर्कस' जैसी कृतियों में यह यथार्थ बहुत साफ दिखता है। वे स्वयं गाजीपुर के कॉलेज में प्रवक्ता थे, लेकिन अपनी मिट्टी और गाँव से जुड़े रहे। इसलिए गाँव की बनती-बिगड़ती जिंदगी का उनका अनुभव किताबी नहीं, अनुभूत था। यही अनुभूति उनकी आंचलिकता को प्रामाणिकता देती है।

भाषिक सौंदर्य: ठेठ लोक-भाषा और मुहावरों का इंद्रधनुष—विवेकी राय की भाषा उनके कथा-साहित्य का सबसे जादुई पक्ष है। मानक हिंदी की शुचिता के साथ भोजपुरी की सोंधी महक और ठेठ हिंदू-मुस्लिम लोक-बोलियों का मिश्रण उनकी शैली को अनोखा बनाता है। वे व्याकरणिक ढाँचे को तोड़ते नहीं, बल्कि उसे लोक-जीवन की लय से जोड़ देते हैं।

उनकी भाषा में "सोंहाई", "कपार पर लादकर", "उघटा-पुरान", "गोत्रोच्चार", "गरजा-गरजी", "हुं-टूं" जैसे लोक-प्रयोग सहजता से आते हैं। ये शब्द पाठक को सीधे गाँव के बीच ले जाते हैं। वाक्यों की लय और प्रवाह लोक-गीत या ढोलक की थाप जैसी गूँजते हैं। नीरस आख्यान भी उनके हाथों में काव्यात्मक और जीवंत हो जाता है। संवाद कृत्रिम साहित्यिक भाषा में नहीं, बल्कि पात्रों की स्वाभाविक बोली में होते हैं। इससे पात्रों की विश्वसनीयता और स्वाभाविकता कई गुना बढ़ जाती है। उनकी शैली चित्रात्मक है। किसी दृश्य का वर्णन करते समय वे पाठक की आँखों के सामने एक चलता-फिरता चित्र खड़ा कर देते हैं—गाँव की सुबह, नदी का तट, खलिहानों की गंध, खेतों में पसीना बहाते किसान। भाषा का यह सौंदर्य केवल सजावट नहीं, बल्कि कथ्य को गहराई देने का माध्यम बनता है।

प्रमुख कथा-कृतियों में इन तत्वों का समावेश- विवेकी राय के कथा-साहित्य का फलक बहुत विस्तृत और बहुआयामी है। उनके प्रमुख उपन्यासों और कथा-संग्रहों में लोक-संस्कृति, आंचलिकता और भाषिक सौंदर्य अपने चरम पर दिखाई देते हैं। ये तीनों तत्व उनकी रचनाओं में अलग-अलग नहीं, बल्कि एक-दूसरे में घुले-मिले रूप में मौजूद हैं। हर कृति में ये तत्व किसी न किसी रूप में गहराई से समाहित हैं और पाठक को पूर्वांचल के जनजीवन से सीधा जोड़ते हैं।

'सोनमती' उनके कथा-शिखर का परिचायक उपन्यास है। यह रचना पूर्वांचल के ग्रामीण समाज, उसकी मिट्टी, किसानों के संघर्ष और लोक-जीवन के विविध रंगों का अत्यंत सजीव चित्रण करती है। नायिका सोनमती केवल एक पात्र नहीं, बल्कि भारतीय ग्राम्य संस्कृति की जीवंत प्रतीक बन जाती है। उसके माध्यम से लेखक ने स्त्री-जीवन की जटिलताओं, पारिवारिक संबंधों की गहराई और सामाजिक परिवर्तनों की बारीकियों को बहुत संवेदनशीलता से छुआ है। उपन्यास में गाँव के लोक-पर्व, रीति-रिवाज, खेतों की मेहनत, नदी किनारे की दिनचर्या और सामूहिक जीवन के उल्लास को इतनी प्रामाणिकता से उकेरा गया है कि पाठक स्वयं उस परिवेश में पहुँच जाता है। सोनमती के चरित्र में लोक-संस्कृति की ममता, धैर्य और संघर्षशील प्रकृति साकार होती है। साथ ही आंचलिकता का पूरा भूगोल—मंगई नदी, बाढ़, सूखा, खेत-खलिहान—जीवंत पात्र की तरह उभरता है। भाषा के स्तर पर भोजपुरी के ठेठ शब्द, मुहावरे और संवाद इतने स्वाभाविक हैं कि वे पाठक को सीधे गाँव की चौपाल पर बिठा देते हैं। यह उपन्यास लोक-संस्कृति, आंचलिकता और भाषिक सौंदर्य तीनों का उत्कृष्ट उदाहरण है।

'जुलूस रुका है' और 'सर्कस' में ग्रामीण समाज के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया, मध्यमवर्गीय विडंबनाएँ और बदलते सामाजिक मूल्य गहराई से विश्लेषित हुए हैं। इन उपन्यासों में पुरानी व्यवस्था के टूटने और नई व्यवस्था के आने का द्वंद्व बहुत साफ दिखाई देता है। गाँव अब केवल यादों का स्थान नहीं रह गया है; वह संघर्ष, पलायन और बदलाव का भी स्थल बन चुका है। 'जुलूस रुका है' में सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों के बीच आम आदमी की स्थिति को बहुत यथार्थपरक ढंग से दिखाया गया है। लोक-संस्कृति यहाँ स्थिर नहीं, बल्कि बदलते समय के दबाव में अपनी जगह तलाशती हुई दिखाई देती है। 'सर्कस' में मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबनाएँ, महत्वाकांक्षाएँ और गाँव-शहर के बीच का द्वंद्व प्रमुखता से उभरता है। दोनों उपन्यासों में आंचलिकता केवल भौगोलिक वर्णन नहीं, बल्कि आर्थिक शोषण, युवाओं के पलायन और पारंपरिक मूल्यों के क्षरण का दस्तावेज बन जाती है। भाषा में भी ठेठ लोक-प्रयोग और मुहावरे बने रहते हैं, जो इन रचनाओं को

कृत्रिमता से बचाते हैं। 'मेरी तेरह कहानियाँ' और अन्य कथा-संग्रहों में ग्रामीण अंचल के छोटे-छोटे प्रसंग, पारिवारिक ताने-बाने, मानवीय संवेदनाएँ और लोक-संस्कृति के अंतःसंबंध बहुत सूक्ष्मता से उकेरे गए हैं। ये कहानियाँ लंबी कथाओं की तरह नहीं, बल्कि जीवन के छोटे-छोटे क्षणों को पकड़ती हैं—जिनमें पूरा समाज झलक जाता है। किसी एक पर्व की तैयारियाँ, किसी परिवार का आंतरिक द्वंद्व, किसी किसान की चुपचाप चलती जिंदगी या किसी स्त्री की अनकही पीड़ा—ये सब कहानियों में बहुत स्वाभाविक ढंग से आते हैं। लोक-विश्वास, रूढ़ियाँ, आपसी रिश्ते और बदलते समय की छाया इन छोटी रचनाओं में भी स्पष्ट रूप से मौजूद है। भाषिक सौंदर्य यहाँ और भी निखर कर सामने आता है क्योंकि कहानी की संक्षिप्तता में भी लेखक लोक-बोलियों की मिठास और मुहावरों की ताकत को पूरी तरह बचाए रखते हैं। ये कहानियाँ सिद्ध करती हैं कि विवेकी राय छोटे कैनवास पर भी बड़े सत्य को चित्रित करने में सक्षम थे।

कुल मिलाकर, उनकी प्रमुख कृतियों में लोक-संस्कृति का उल्लास, आंचलिकता का यथार्थ और भाषिक सौंदर्य की सोंधी महक एक साथ मिलकर एक ऐसा रचना-संसार रचते हैं जो पाठक को लंबे समय तक प्रभावित करता है। हर कृति में ये तीनों तत्व अलग-अलग अनुपात में होते हुए भी एक-दूसरे के पूरक बनते हैं और विवेकी राय के कथा-साहित्य को उसकी विशिष्ट पहचान देते हैं।

निष्कर्ष- डॉ. विवेकी राय का कथा-साहित्य भारतीय ग्रामीणता का एक प्रामाणिक महाकाव्य है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह साबित किया कि गाँव केवल उपेक्षित बस्तियाँ या अज्ञान के केंद्र नहीं हैं। वे भारतीय संस्कृति, नीति, नैतिकता और जीवन-दर्शन के जीवंत स्रोत हैं। लोक-संस्कृति का उल्लास, आंचलिकता का यथार्थ और भाषिक सौंदर्य की सोंधी महक मिलकर उनकी रचनाओं में एक ऐसी त्रिवेणी बनाते हैं जो पाठक के मन को लंबे समय तक आलोकित रखती है।

नगरीय ताप से तपी हुई मनोभूमि पर उनकी रचनाएँ ग्रामीण राग की वह वर्षा हैं जिसमें भींगकर हर संवेदनशील पाठक अपनी मूल जड़ों की महक से सराबोर हो उठता है। आज जब गाँव तेज़ी से बदल रहे हैं और कई परंपराएँ लुप्त होती जा रही हैं, विवेकी राय का साहित्य हमें याद दिलाता है कि हमारी जड़ें कहाँ हैं और उन जड़ों से जुड़ना कितना ज़रूरी है। उनका कथा-संसार न केवल साहित्यिक उपलब्धि है, बल्कि ग्रामीण भारत के भविष्य को समझने का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज भी है।

विवेकी राय ने गाँव को न तो आदर्श बनाकर प्रस्तुत किया और न ही उसे केवल समस्याओं का अड्डा दिखाया। उन्होंने दोनों पक्षों को ईमानदारी से उकेरा। एक ओर लोक-पर्वों का सामूहिक उल्लास, आपसी भाईचारा और सांस्कृतिक निरंतरता है, तो दूसरी ओर शोषण, पलायन, जातिगत बाधाएँ और बदलते मूल्यों की पीड़ा भी है। यही संतुलित दृष्टि उनके साहित्य को कालजयी बनाती है। आंचलिकता उनके यहाँ बाहरी वर्णन नहीं, बल्कि मनुष्य और प्रकृति, समाज और अर्थतंत्र के गहरे संबंधों का चित्रण है। भाषा के स्तर पर उन्होंने हिंदी कथा-साहित्य को लोक-भाषा की ताजगी और जीवंतता से समृद्ध किया।

आज के संदर्भ में जब शहरीकरण तेज़ी से बढ़ रहा है और गाँव अपनी कई पारंपरिक पहचान खो रहे हैं, विवेकी राय का कथा-साहित्य और भी प्रासंगिक हो जाता है। यह हमें याद दिलाता है कि विकास केवल आर्थिक प्रगति नहीं, बल्कि सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहना भी है। उनकी रचनाएँ पाठक को केवल मनोरंजन नहीं देतीं, बल्कि उसे अपनी मिट्टी, अपने लोगों और अपने अतीत से जोड़ती हैं। इस अर्थ में विवेकी राय का कथा-साहित्य हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि ही नहीं, बल्कि भारतीय ग्रामीण चेतना का एक सच्चा और जीवंत दस्तावेज भी है जो आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा और मार्गदर्शन दोनों का काम करेगा।

संदर्भ सूची-

1. दत्ता, अमरेश (संपादक) — Encyclopaedia of Indian Literature: Navaratri-Sarvasena, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, १९९१।
2. राय, डॉ. विवेकी — सोनमती (उपन्यास), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. राय, डॉ. विवेकी — जुलूस रुका है (उपन्यास), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. पांडेय, लक्ष्मीकांत (संपादक) — नवनिकष (विवेकी राय विशेषांक), वर्ष-२, अंक-५, नवंबर २००८ (विशेषकर राजीवरंजन का लेख: 'विवेकी राय के निबंधों में जीवन-संवेदन', पृष्ठ ३६-३९)।
5. राय, मान्धाता (संपादक) — निवेदिता (विवेकी राय विशेषांक), सहजानंद महाविद्यालय, गाजीपुर।
6. शर्मा 'गंगेश', गजाधर प्रसाद — हिन्दी कथा-साहित्य में सामाजिक यथार्थ (संदर्भ: कथाकार डॉ. विवेकी राय)।